Volume-2, No. II, Aug-2015, pp. 71-73

ललित निबंधकार–डा0 राम अवध शास्त्री के निबंध साहित्य में जीवन मूल्य

डा0 अर्चना देवी अहलावत, प्रवक्ता हिन्दी विभाग
दयानंद आर्य कन्या पी.जी. कॉलिज, मुरादाबाद उत्तर प्रदेश भारत।

सार

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की परम्परा के महत्वपूर्ण हस्ताक्षर–हिन्दी के सुपरिचित ललित निबंधकार डा0 रामअवध शास्त्री का जन्म 16 अगस्त 1947 को ग्राम–टाण्डा, जिला गाजीपुर, उत्तर प्रदेश में हुआ था। इनके ललित निबंधों में कहीं परम्परा की अनुगूंजें तो कही आधुनिकता से पीडित उनकी चिंताओं का सामना होता है तो कहीं भारतीय संस्कृति का सहज प्रवाह मिलता है। वर्तमान युग की विसंगतियों और उनसे जूझ रहे आम आदमी के संघर्ष की कहानी तथा कहीं समाज के कमजोर, पीड़ित व्यक्तियों के प्रति गहरी सहानुभूति मिलती है तो कहीं सामाजिक कुरीतियों, अंधविश्वासों और संर्कीणताओं को उखाड़ फेंकने का भाव मिलता है। इन्ही भावों–विषयों के संदर्भ में सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक जीवन मूल्यों में समकालीनता बोध जैसे डा. राम अवध शास्त्री के जीवन का यथार्थ अनुभव हो।

जीवन परिचय

डा0 राम अवध शास्त्री ने एम0ए0 हिन्दी, काशी विद्यापीठ तथा पी–एच0डी0 की शिक्षा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से प्राप्त की। कुछ दिनों के बाद रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय के जगदीश सरन हिन्दू कॉलिज, अमरोहा के पी0जी0 हिन्दी विभाग में पहले अध्यापक, बाद में विभागाध्यक्ष नियुक्त हुए। सेवानिवृत होने के बाद मेरठ विश्वविद्यालय के चौधरी महेन्द्र सिंह कॉलेज, गढ़मुक्तेश्वर में प्राचार्य पद पर कार्य किया।

5 मार्च 2013 में परिवार में पत्नी मीना शास्त्री, दो पुत्रों को छोड़ विश्राम की चिर निद्रा में सो गये।

सम्मान

उत्तर प्रदेश सरकार तथा उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान के साथ हिन्दी की उल्लेखनीय सेवा के लिए विद्यासागर, सहित्य महामहोपाध्याय, भोजपुरी भास्कर, बीसबीं शताब्दी रतन, संपूर्णानंद सम्मान तथा अदबी संगम सम्मान से सम्मानित रहे थे।

निबंध

डायरी के उड़ते पृष्ठ (1982) बूझत स्याम कौन तू गौरी (1991), कांस फूल गये (1999) तथा पुस्तकों पत्र पत्रिकाओं में समय–समय पर प्रकाशित शताधिक ललित निबंध अन्य प्रकाशित रचनाएं–संदर्भ और समीक्षा, विचार और परख, निरालाः व्यक्ति और कवि, बिखरी यादें, सरदार पूर्ण सिह संस्मरण आदि विशेष चर्चित रचनायें हैं।

कोई भी साहित्य या साहित्यकार जब तक समाज और समाज के समकालीन मूल्यों, संस्कृति से तारतम्य नही बैठाता, तब तक वह साहित्य और साहित्यकार कितना भी श्रेष्ठ क्यों न हो, निर्जीव होता है। तारतम्य–सम्प्रेषणीयता साहित्य और साहित्यकार को महान बनाते हैं। इसी साहित्य में जब साहित्यकार सामाजिक आदर्श, व्यक्तिगत उच्चता, स्वंय का भोगा यथार्थ अनुभव आदि रूपायित करता है तो वही जीवन मूल्य बन जाते हैं।

मूल्यों के संदर्भ में डा0 मंजुला गुप्ता कहती हैं–प्रेम, सेवा, सद्भाव, सहानुभूति आदि तत्व क्षीण हो चुके हैं। व्यक्ति का व्यक्ति से स्वार्थ ही प्रमुख रह गया है। मानवीय सम्बन्धों में शिथिलता आ चुकी है। 1

आज मानवीय सम्बन्धों सामाजिक परिवेश के मूल्यों में गिरावट आ रही है। ''सामाजिक मूल्यों का यह ह्रास मनुष्य की संवेदना के समक्ष एक गम्भीर चुनौती है। बड़े–बड़े महानगरों से लेकर गॉवों तक इन सामाजिक मूल्यों का तीव्र ह्रास हुआ है। वह आत्मीयता, सारल्य सहानुभूति एवं सह अस्तित्व की भावना जो विलुप्त हो चुकी है और जो थोड़ी शेष है वह भी निःशेष हो रही है'' को बचाना आवश्यक है।[2]

समाज हित के इन्ही मानवीय, नैतिक, समकालीन बोध को दर्शातें जीवन मूल्यों का रामअवध शास्त्री के निबंधों में परिचय इस प्रकार है।

'अब तो बरसो' निबंध में डा0 रामअवध शास्त्री लिखतें है–''अपने देश में प्रारम्भ से ही जेठ (बड़ा) बनने की ललक रही है। जिस किसी को जहॉ कहीं अवसर मिल जाता है जेठ बनने के लिये दूसरों को तपाने लगता है। कुछ तो अपनी जेठाई सिद्ध कर चुके हैं और कुद जेठ बनने की ललक में खूनों की होली खेल रहे हैं।[3]

यह आज के समाज का वास्तविक चेहरा है। लोग अपने को श्रेष्ठ बनाने के लिए आज जीवन मूल्यों को त्यागकर कुछ भी करने को तैयार है। लोग अपनी इस श्रेष्ठता को बड़ी चतुरता के साथ व्यक्त करते हैं। 'काहे को सोच करे रसखान' निबंध में लिखते हैं–''चतुरता के सामने आज कुशलता हार रही है। हार ही नही, नाक भी रगड़ रही है। यदि आपको आगे बढ़ना है, धन कमाना है, किसी को नीचा दिखाना है, किसी से कुर्सी छीननी है अथवा कुछ ओर करना–धरना है तो चतुर

बनिये। आप कामयाब हो जायेंगे। कुशलता में क्या रखा है और उसे आज कौन पूछ रहा है?,,[4] आज के युग की इस उखाड़ू–पछाड़ू नीति में चतुरता का ही चारों और साम्राज्य है, यही आज के समय की नीति है और समाज में चतुर ही श्रेष्ठ है। लेकिन निबंधकार की आशा इस मूल्यहीनता में रही नही है वह आशवान है–''चतुरता की इस आपाधापी में भी कुशलता मरी नही है, जीवित है, क्योंकि उसके पॉवों में अपनी शक्ति है, उसकी भुजाओं में अपना बल है। उसकी नींव इतनी गहरी है कि हिलाये नही हिलती तभी तो वह हारकर न हारती है और न जीतकर जीतने का भाव जताती है। उल्टे सारी जीत को बहुत संकोच के साथ किसी विभीषण के हाथ में थमा देती है।,,[5] जिस देश की संस्कृति में ऐसे भाव–मूल्य हों वह देश कभी नष्ट नही हो सकता है। ''मनमाने की बात'' निबंध में हठधर्मी से हठधर्मिता शब्द बनाकर अपने भावों को गहराई से व्यक्त किया है। हठधर्मी व्यक्तियों के कारण समाज और संस्कृति अनेक मूल्यों की बलि देनी पड़ी, इतिहास इसका गवाह है। अनेक समाज और संस्कृतियों के विनाश के मूल में हठधर्मिता ही मुख्य कारण था। महाभारत का युद्ध 'हठधर्मिता ही मुख्य कारण था। महाभारत युद्ध 'हठ' की ही देन था। ऐसी 'हठ' का निबंधकार दूर से ही सत्कार–नमस्कार की सलाह देता है। 'डायरी के उड़ते पृष्ठ' में निबंधकार जीवन के विकास के लिए गति–परिर्वतन को जरूरी मानता है। जीवन के विकास के लिए आवश्यकताओं की भूख और संघर्ष अनिवार्य मानता है। पश्चिमी सभ्यता का विकास इन्ही मूल्यों की देन है। ''जिस देश की जनता संघर्ष नही करती, जूझना नही जानती, खतरे से नही खेलती, वहॉ के निवासी कायर हो जाते है, उनका विकास रूक जाता है,, 'भारतीय भूख को दबाने में लगे रहे और पश्चिमी भूख को बढ़ाने में, वे भौतिक संसाधनों से सम्पन्न होते गये और हम उनके आश्रित,,[6]

जन्मभूमि मम पुरी सुहावनि' में उजड़ते गॉवों पर चिन्ता व्यक्त की है। गॉवों का आपसी भाई चारा, संस्कृति सब नष्ट होती जा रही है। भौतिकता की दौड़ में हम मायामृग की तरह भागते जा रहे हैं, गॉव की चिन्ता करने का समय हमारे पास नही है। लिखते हैं–''उदंती की अमराइयों का क्या अंत हुआ पूरा गॉव ही उजड़ गया। पूरे गॉव पर ही विपत्ति आ गयी । पारस्परिक सम्बन्ध बिगड़ने लगे, बैर का पौधा लहराने लगा, ममता सिसकने लगी तो गॉव का वैभव सन्यासी बना गया।''[7] साम्प्रदायकिता के बीच मानवता और संवेदना को व्यक्त करता निबंध 'अब्दुल शमी'। यह निबंध जीवन के उन मूल्यों पर भी चिंता व्यक्त करता है जिसके चलते आज मनुष्य की मनुष्य से दूरी बढ़ती जा रही है, भाईचारा खत्म होता जा रहा है, धर्म के नाम पर लोग खून बहा रहें हैं। ऐसे समाज में लेखक–पात्र अब्दुल शमी की पत्नी को खून देकर मानव–मानवता के मूल्यों की स्थापना करता है।

'बुल्ली की पीड़ा निबंध में शास्त्री जी ने जिस जातीय व्यवस्था पर प्रश्न चिन्ह लगाया है, उसे आज आरक्षण के रंग में रंग दिया गया है। व्यवस्था अब भी वही है, प्रश्न में वही बुल्ली की पीड़ा आज का यथार्थ है–'' बस इतना बता दीजिये कि जातीय शोषण का अंत कब होगा? आदमी कब आदमी को समझेगा और उसे जीने की पूरी आजादी देगा? यह सब छलावा है पंडित जी, मुझे क्यों छल रहे हैं। कहीं ऑसू पोंछने से ऑसू का निकलना बंद होता है? सच आज समाज में ऑसू पोंछने वाले तो बहुत है पर ऑसुओं से मुक्ति देने वाला कोई नही।[8]

'मेहमानों की दुनिया' निबंध में अतिथि की वर्तमान स्थिति का वर्णन करते हैं। चिंता व्यक्त करते हैं मेहमान गिरी के मौलिक मूल्यों की । आज मेहमानगिरी व्यवसाय हो गया है, मेहमान स्वाभिमान, यश–अपयश की चिन्ता नही करते हैं। 'घर की माया' निबंध में व्याख्यापित करते घर बनाने में तिनका–तिनका जोड़ना पड़ता है। ऐसा घर रिश्तों को जोड़ता है, सम्बन्धों में तरावट लाता है। अब घर में कपूत पैदा होकर घर और घराने के सम्मान को चोट पहुॅचाते है तो यह पीड़ा असहनीय हो जाती है। लेखक चिंता व्यक्त करता है जब घर में कपूत पैदा हो जाता है तो घर की मर्यादा–मूल्य टूट कर बिखर जाते हैं। घर ही नही घर के लोगों का आपसी प्रेम भी बिखर जाता है, टूट जाता है।

गुरू जी का चूल्हा निबंध में खत्म होती गुरू–शिष्य परम्परा पर चिन्ता व्यक्त की है। आज समाज में जो अव्यवस्था और मूल्यहीनता बढ़ रही है, उसका जिम्मेदार गुरू को समझते हैं–''समाज ने उन्हें जिस कार्य के लिये नियुक्त किया था और जिसके कारण उन्हे आदर के सिंहासन पर प्रतिष्ठित किया था, उसे ही वे भूल गये। वे भूल गये कि वे मार्गदर्शक हैं, वे भूल गये कि वे प्रबोधक हैं, वे भूल गये कि वे किसी भौगोलिक सीमा में नही बंधे हैं, वे भूल गये कि वे मानवता के लिये समर्पित हैं और यह भूल गये कि वे मानव कल्याण के बंधन में बंधे हुए हैं।[9]

जब समाज के मुखिया ही सामाजिक मूल्यों के पतन को मूक देखते रहें तो ऐसे देश और राष्ट्र को कौन बचा सकता है। 'महुआवन' निबंध में युवा पीढ़ी का विकास कहॉ पहुॅचा, एक समग्र मूल्याकंन दृष्टि समाज के सामने लाता है। आज के युवा अधिकारों के लिए तो आन्दोलन करते हैं, पर अपनी संस्कृति के ज्ञान से अनभिज्ञ हैं। उन पर लेखक तरस कर रह जाता है। ''जिस देश की तरूणाई जिसके ऊपर संस्कृति की सुरक्षा का भार है यदि वही अपने लोकजीवन और लोक संस्कृति से उदासीन होकर आयातीत सभ्यता और संस्कृति के जाम में ढलकर अपनी संस्कृति को महत्वहीन मानकर एक

ऐसी संस्कृति के बेसुरे राग को अलाप रही हो जो, जिसका न तो वह अर्थ समझती हो और न जिसमें उसकी अगाध आस्था हो, केवल आधुनिक बनने की ललक हां लेकिन हॉ जरा अपने आपको, अपनी उपलब्धियों को तो देखो कि तुम कहॉ हो? [10]लेखक महुआ के माध्यम से लोक संस्कृति और लोकजीवन को अभिव्यक्त करते हुए देश का भविष्य युवाओं के जीवन मूल्यों पर ध्यान आकृष्ट कर रहा है, या देवी सर्वभूतेषू' निबंधकार आध्यात्मिक जीवन मूल्यों को दिखाता है–आज लोग मंदिरों में अपनी शानों–शौकत दिखाते हैं। लेकिन मॉ के प्रेम के पात्र वही हैं जो भूखे हैं, जिनके शरीर पर वस्त्र नही है, लेकिन प्रेम और भक्ति से सरोबार मॉ के दर्शन करने आये हैं, किसी को धोखा देने नही। अंत में मॉ जगदम्बा से भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिकता रूपी असुरों को नष्ट करने की प्रार्थना करता है। 'ग्रीष्म का एक गॉव'– निबंध में भारतीय ग्रामीण संस्कृति का वर्णन है। लेखक जब गॉव के लोगों से मिलता है, विभिन्न विषयों पर उनकी चर्चाओं को सुनता है तो महसूस करता है, ग्रामीणों में ज्ञान की भरपूर ऊर्जा है। लेकिन समाज और सांस्कृतिक विरासत को संजोने वाले ग्रामीण अंधविश्वासों से जुड़े हैं। गॉव में प्रवेश करते समय जिस माता के मंदिर में स्त्रियां पुत्र प्राप्ति के लिए पूजा कर रही थी, लौटते समय लेखक उस मंदिर को प्रणाम करता है। कहता है हे मॉ पुरूषों में विवेक पैदा करो, जिससे वह तुम्हारी बेटियों का मन पहचान सकें, क्योंकि स्त्रियॉ ही परम्परा –संस्कृति की संवाहक होती हैं। [11]

मधुवन महक उठा' निबंध में मधुबन के माध्यम से समाज की स्वार्थी–मतलबी प्रकृति पर दृष्टिपात किया है। आधुनिक समाज को पूँजीवाद और सामंतवाद के चक्र में लिप्त बताता है। 'मनोहारिणी गंगा' निबंध में मॉ गंगा की वर्तमान व्यथा का वर्णन है। आज झूठे और पाखण्डी लोगों ने मॉ गंगा को मलिन कर दिया है उसकी पवित्रता की झूठी कसमें खाते हैं। लेकिन मॉ गंगा मॉ आजी भी भारतीय दर्शन हो संस्कृति को अपने में संजोये बहती जा रही हैं। ' मोहि कहॉ विश्राम' यह निबंध लेखक की उस समय की अभिव्यक्ति है जब वह महाविद्यालय के अध्यापन कार्य से अवकाश ग्रहण करने जा रहे थे। सेवा के स्थान पर 'सेवकाई' शब्द का चयन कर सकते हैं–''सेवकाई से कोई भी राष्ट्र सबल बनता है कोई भी संस्कृति गौरवान्वित होती है। कोई भी सभ्यता विकसित होती है। कोई भी धर्म आदर पाता है। एक मनुष्य दूसरे मनुष्य की पीड़ा में चुरने के लिये विवश हो जाता है धन्य है ऐसी सेवकाई और धन्य हैं ऐसे सेवक जो दूसरों के लिये अपने सुखों की तिलांजलि दे देते हैं।,,[12]

पाठ्यक्रम रूपी विसंगतियों पर दृष्टि डालते हुए कहते हैं–यदि हमारा पाठ्यक्रम हमारी आकांक्षाओं के अनुरूप रहा होता, तो आज भारतीय समाज का चेहरा कुछ और ढंग का होता। समाज में न तो शोषण होता, न सामाजिक उत्पीड़न होता, न धार्मिक उन्माद होता, न हिंसा होती और न अमीरी गरीबी के बीच इतना अधिक फासला होता। [13] आगे लेखक मनुष्य बनने की सीख देता है। एक–दूसरे को सहयोग देने वाले मनुष्य बनो। 'मनुष्य ही शासन करता है मनुष्य ही शासित होता है, यही मनुष्य समाज का मसीहा होता है और यही मनुष्य कल–कारखानों मे अपना पसीना बहाकर विश्व के परिदृष्य को बदल देता है। एसे मनुष्य को जब तक प्रतिष्ठा नही मिलेगी तब तक हमारा समूचा विकास बेमाने है। जिन देशों और जिस समाज में ऐसे मनुष्यों की प्रतिष्ठा हुई है, वही देश आज विभिन्न दृष्टियों से आगे बढ़े हुए हैं और जिन देशों तथा समाजों में उन्हें प्रतिष्ठा नही मिली है वे कला–कौशल के क्षेत्र में पिछड़ गये हैं। वे या तो गुलाम हो चुके हैं 'अथवा गुलाम होने वाले हैं' निश्चय ही एसे मनुष्य हमारे चिंतन का विषय हैं। [14] ऐसे लोग ही समाज और समाज के मूल्यों की सुरक्षा का दायित्व पूरा करते हैं और ऐसा व्यक्ति जिसमें मनुष्य को मनुष्य बनाने का भाव हो कभी सेवानिवृत नही हो सकता, विश्राम की बात नही सोच सकता है।

ऐसे जीवन मूल्यों के धनी हैं ललित निबंधकार डा0 राम अवध शास्त्री जो आज भी अपने ललित निबंधों के माध्यम से समाज में जीवन मूल्यों स्थापना कर रहे हैं, अपने निबंधों में जीवंत होकर सेवकाई कर रहे हैं।

संदर्भ–

1. हिन्दी उपन्यास, समाज और व्यक्ति का द्वन्द्व– डा0 मंजुला गुप्ता, पृ0 73
2. हिन्दी उपन्यास, समाज और व्यक्ति का द्वन्द्व– डा0 मंजुला गुप्ता, पृ0 11
3. अब तो बरसो– काहे को सोच करे रसखान, सम्पादक मूलचन्द गौतम पृ0 12
4. काहे को सोच करे रसखान–, काहे को सोच करे रसखान सम्पादक मूलचन्द गौतम पृ0 19
5. काहे को सोच करे रसखान, काहे को सोच करे रसखान सम्पादक मूलचन्द गौतम पृ0 20
6. डायरी के उड़ते पृष्ठ– काहे को सोच करे रसखान सम्पादक मूलचन्द गौतम पृष्ठ 39
7. जन्मभूमि ममपुरि सुहावनि– काहे को सोच करे रसखान सम्पादक मूलचन्द गौतम पृष्ठ47
8. बुल्ली की पीड़ा– काहे को सोच करे रसखान सम्पादक मूलचन्द गौतम पृ0 62
9. गुरू जी का चूल्हा – काहे को सोच करे रसखान सम्पादक मूलचन्द गौतम पृ0 100
10. महुआव– काहे को सोच करे रसखान सम्पादक मूलचन्द गौतम पृ0 105
11. मधुबन महक उठा– काहे को सोच करे रसखान सम्पादक मूलचन्द गौतम पृष्ठ 115
12. मोहि कहॉ विश्राम– काहे को सोच करे रसखान सम्पादक मूलचन्द गौतम पृष्ठ 131
13. मोहि कहॉ विश्राम– काहे को सोच करे रसखान सम्पादक मूलचन्द गौतम पृष्ठ 133
14. मोहि कहॉ विश्राम– काहे को सोच करे रसखान सम्पादक मूलचन्द गौतम पृष्ठ 133